स्वतंत्र भारत में सामाजिक और राजनीतिक अवस्था में ही खराबी नहीं आई है, अपितु आर्थिक स्थिति भी बहुत बिगड़ गई है। जोर-शोर से प्रचार किया जा रहा है कि भारत विश्व की एक महाशक्ति बनने की ओर बढ़ रहा है। अमेरिका के राष्ट्रपति भी ऐसा ही प्रमाण-पत्र दे रहे हैं। किन्तु देश में अनेक स्थानों पर किसान दारिद्रय से तंग आकर आत्महत्याएं करने लगे हैं। क्या इन दोनों बातों में कोई मेल है?

स्वतंत्रता पाने के बाद हमने अपने देश की वास्तविकता समझने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं की। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका और रशिया विश्व की महानतम् शक्तियों के रूप में उभरे थे। स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने इन दोनों की प्रगति की दिशा को अपनाना श्रेयस्कर समझा। उसे मिश्रित अर्थव्यवस्था का नाम दिया। इन दोनों महाशक्तियों में से रशिया अपनी ही नीतियों का शिकार बन प्रतिस्पर्धा में किल रहा।

अपनाई गई अर्थव्यवस्था भारत की वस्तुस्थिति के आधार पर खड़ी नहीं हुई थी। हमारे पास जनशक्ति का भरपूर भण्डार था। अमेरिका में पूंजीगत शक्ति का आधिक्य था। अत: पूंजी आधारित अर्थव्यवस्था हमारे लिए अनुकूल नहीं हो सकती थी। वैसे भी पूंजी आधारित अर्थव्यवस्था मानवीयता के प्रतिकूल होती है। इसमें इने-गिने लोग ही तरक्की कर पाते हैं। उनकी संपत्ति बेतहाशा बढ़ती है। इसके बावजूद आजकल विश्व में यही हवा बह रही है। यह जानकर आश्चर्य होगा कि साम्यवादी कहलाने वाले चीन में भी अरबोंपति अस्तित्व में आए हैं, जबकि चीन के देहाती क्षेत्रों में बेकारों एवं गरीबों की संख्या बेकाबू हो रही है। स्वयं अमेरिका में अरबोंपतियों की संख्या अब 371 हुई है। समाज में बढ़ रही यह बेहिसाब विषमता धीरे-धीरे वहां भी असंतोष के स्वर उठा रही है।

भारत में भी अरबोंपतियों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है। वर्ष 2004 में भारत में अरबोंपतियों की संख्या 12 थी, जो वर्ष 2005 के अंत तक 23 अर्थात् दुगनी हो गई है। हमारी आर्थिक प्रगति कुछ ही लोगों के लिए वरदान सिद्ध हो रही है। शेष समाज बेकारी और गरीबी से जूझ रहा है। क्या यह वस्तुस्थिति भारत के महाशक्ति बनने के संकेत दे रही है?

उपर्युक्त विवरण किसी को दोष देने के हेतु से अंकित नहीं किया है। भारत का चतुर्दिक विकास करने के लिए पृष्ठभूमि के रूप में उपर्युक्त परिस्थिति प्रस्तुत है। मानव के नवजात शिशु का विकास एकात्म रूप में होता है। एक-एक अवयव का अलग-अलग विकास नहीं होता। सभी अंग एक-दूसरे के लिए पूरक अर्थात् एकात्म रूप में विकसित होते हैं। उसी को बच्चे का स्वास्थ्यपूर्ण विकास माना जाता है। राष्ट्र-जीवन का विकास भी एकात्म रूप में ही होना चाहिए। इसी मर्म की अनुभूति कर स्व. दीनदयाल जी ने "एकात्म मानव दर्शन" की खोज की थी। देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, राजनीतिक, आदि का समन्वित विकास का युगानुकूल मार्ग उन्होंने प्रस्तुत किया था। इसकी महत्ता उनके राजनीतिक एवं गैर राजनीतिक साथी समझ नहीं पाए। अन्यथा, स्वतंत्र भारत की यह अवस्था नहीं होती।

शुभाकांक्षी -

नाना देशमुख

(नाना देशमुख)

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

आदि काल से ही भारत में लोकतांत्रिक जीवन प्रणाली प्रचलित थी। वह केवल शासन व्यवस्था तक सीमित न होकर सामाजिक जीवन के हर अंग में व्याप्त थी। बहुसंख्य समाज कृषि-कार्य में लगा रहा। अत: अन्नदाता किसान लोकतंत्र का आधारस्तंभ था। उसने अपना स्वावलंबन अंग्रेजों के शासन काल में भी बनाए रखा।

किन्तु 1947 में प्राप्त स्वतंत्रता के बाद हमारी अपनी सरकारों ने लोकतंत्र के प्रहरी किसानों के स्वावलंबन पर भी कुठाराघात किया।

पश्चिम का पूंजीवाद और रूस-चीन का साम्यवाद समान रूप से लोकतंत्र के प्रतिकूल हैं। भारत की सरकारें इन्हीं के झूलों पर झूल रही हैं। लोकतंत्र के मूलभूत आधार को समझने का हमारे शासकों ने प्रयास ही नहीं किया। वे केवल सत्ता-संघर्ष में ही लगे हुए हैं।

पश्चिमी प्रभाव में आकर औद्योगीकरण की धुन में हमारी सरकारों ने खेती का भी अधिकाधिक मशीनीकरण करना श्रेयस्कर समझा। वे बड़े-बड़े किसानों से घिरे रहते हैं। उन्हीं के लिए कृषि के फायदेमंद तौर-तरीके अपनाते हैं। बड़े-बड़े किसानों को मशीनों के आधार पर कृषि-कार्य करना अधिक सुविधाजनक होता है। वही भारत के सरकारों की कृषि-नीति बन गई तथा भारत की कृषि का मशीनीकरण तेजी से बढ़ता गया।

मशीनीकरण के साथ खाद की आवश्यकता पूर्ण करनी थी। औद्योगीकरण के प्रेमी देश हर बात के लिए वैज्ञानिक विश्लेषण कर कदम बढ़ाते हैं। उन्होंने खेती की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए कृषि-भूमि का रासायनिक विश्लेषण किया और रासायनिक खादों का आविष्कार कर उसका प्रचलन किया।

इन रासायनिक खादों का तत्कालीन लाभ अवश्य दिखाई देता है, जैसा शराबी को प्रारंभ में अधिक स्फूर्ति अनुभव होती है। किन्तु रासायनिक खादों से फसलों पर कई प्रकार की नई बीमारियों का प्रकोप बढ़ता है। इन बीमारियों के निराकरण के लिए रासायनिक कीटनाशकों का उत्पादन किया जाने लगा। इस प्रकार, औद्योगिक देशों में रासायनिक कृषि-पद्धति प्रचलित हुई।

कृषि-मशीनों का, रासायनिक खादों का तथा रासायनिक कीटनाशकों का उत्पादन पूंजीपतियों के विशालकाय कारखानों में होता है। परिणामस्वरूप, किसानों को अपने स्वावलंबन का बलिदान कर कृषि-उपकरणों के लिए पूंजीपतियों पर निर्भर रहने के लिए मजबूर होना पड़ता है। यह कृषि-पद्धति किसानों के प्रतिकूल तथा पूंजीपतियों के अनुकूल है। पूंजीपतियों को असंख्य किसानों का सहज में शोषण करने की सुविधा उपलब्ध हुई